

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 7 अध्याय 7: गर्भ का ज्ञान

14 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



एक शिशु सर्वोच्च ज्ञान कैसे सीख सका? प्रह्लाद एक अद्भुत उत्तर देता है: जब वह अभी अपनी माता के गर्भ में ही था, ऋषि नारद ने उसकी माता को आश्रय दिया और उसे आत्म-विज्ञान सिखाया — और वह अजन्मा शिशु सुन रहा था।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। पिछले अध्याय में प्रह्लाद के सहपाठियों ने पूछा था कि जब वह महल में बन्द एक शिशु था, तब वह ऋषि नारद से ज्ञान कैसे पा सका; सप्तम स्कन्ध का यह सप्तम अध्याय उसका आश्चर्यजनक उत्तर है, जो उसकी निर्भय श्रद्धा को उस शिक्षा तक ले जाता है जो उसने अपने जन्म से पहले ही ग्रहण

कर ली थी।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 7 (सप्तम स्कन्ध)
- अध्याय: 7
- अध्याय-शीर्षक: प्रह्लाद ने गर्भ में क्या सीखा
- मुख्य वक्ता: प्रह्लाद, ऋषि नारद की शिक्षा का स्मरण करते हुए (नारद द्वारा सम्राट युधिष्ठिर को सुनाई गई कथा के भीतर)
- मुख्य श्रोता: दैत्यों के नन्हे पुत्र; तथा कथा-परिधि में, सम्राट युधिष्ठिर
- मुख्य स्थान: वह युद्धभूमि तथा मार्ग जहाँ इन्द्र ने रानी को पकड़ा; नारद का आश्रम; तथा असुरों की पाठशाला
- मुख्य विषय-वस्तु: कैसे नारद ने प्रह्लाद की माता की रक्षा की तथा उसे आत्म-विज्ञान सिखाया, जिसे गर्भस्थ प्रह्लाद ने ग्रहण किया; तथा नित्य आत्मा और शुद्ध भक्ति पर उस शिक्षा का सार
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 7, अध्याय 7, श्लोक 1-55
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

संकट में रानी

प्रह्लाद ने अपना उत्तर अपने जन्म से पूर्व की एक कथा से आरम्भ किया। जब उसके पिता हिरण्यकशिपु मन्दराचल पर वे घोर तपस्याएँ कर रहे थे जिनसे वे बाँबियों के नीचे दब गए थे, तब इन्द्र तथा देवताओं ने अवसर पाकर असुरों पर एक महान अभियान छेड़ दिया। असुर सेनापति केवल अपने ही प्राणों की चिन्ता कर घर-परिवार छोड़कर चारों दिशाओं में भाग गए। विजयी देवताओं ने महल लूट लिया, और स्वयं इन्द्र ने रानी को — प्रह्लाद की अपनी माता को — बन्दी बना लिया, जिसे काँपती और रोती हुई ले जाया जा रहा था।

उसी क्षण देवर्षि नारद उस मार्ग से आ निकले और उसका संकट देखा। उन्होंने इन्द्र को तत्काल उसे मुक्त करने की आज्ञा दी: वह निर्दोष है, उन्होंने कहा, और दूसरे की विवाहिता पत्नी। इन्द्र ने आपत्ति की कि वह अपने गर्भ में देवताओं के शत्रु हिरण्यकशिपु का बीज धारण किए हैं, और वह उसे तब तक रोक रखना चाहता है जब तक शिशु का जन्म न हो, ताकि वह उसका नाश कर सके। किन्तु नारद ने शिशु के विषय में सत्य प्रकट किया:

श्रीनारद उवाच

अयं निष्किल्बिषः साक्षान्महाभागवतो महान् ।

त्वया न प्राप्स्यते संस्थामनन्तानुचरो बली ॥ १० ॥

śrī-nārada uvāca ayaṁ niṣkilbiṣaḥ sāksān mahā-bhāgavato mahān tvayā na prāpsyate samsthām anantānucaro bali

अर्थ: नारद ने कहा: यह शिशु पूर्णतया निष्पाप है — वस्तुतः भगवान् का एक महान तथा परम भक्त, अनन्त भगवान् का बलशाली सेवक। वह तुम्हारे हाथों कभी मृत्यु को प्राप्त नहीं होगा। (SB 7.7.10)

ऋषि के वचन स्वीकार कर इन्द्र ने रानी को मुक्त कर दिया और, उसके गर्भ में स्थित महान भक्त के प्रति श्रद्धावश, स्वर्ग लौटने से पूर्व उसकी आदरपूर्वक परिक्रमा की।



ऋषि नारद हस्तक्षेप करते हैं जब इन्द्र बन्दी रानी को पकड़े है, यह प्रकट करते हुए कि उसके गर्भ में स्थित शिशु भगवान् का एक निष्पाप तथा महान भक्त है जिसका कभी वध नहीं हो सकता (SB 7.7.6-11)।

गर्भ में सुना गया ज्ञान

तब नारद रानी को पूरे सम्मान के साथ अपने आश्रम ले गए और उसे सान्त्वना दी, यह कहते हुए कि जब तक उसका पति न लौटे तब तक वह वहीं रहे। वहाँ वह भय से मुक्त रहती, ऋषि की भक्तिपूर्वक सेवा करती, अपने शिशु के सकुशल जन्म की प्रतीक्षा करती। उसका शोक हरने के लिए — और, प्रह्लाद जोड़ता है, स्वयं उसके अपने हित के लिए — करुणामय ऋषि ने उसे धर्म का सार, जो भगवान् की भक्ति है, तथा शुद्ध ज्ञान, आत्मा और अनात्मा के बीच का विवेक, दोनों सिखाए। समय पाकर वह शिक्षा उसकी माता की स्मृति से मिट गई; किन्तु उस शिशु से कभी नहीं मिटी जिसने उसे गर्भ में सुना था।



अपने शान्त आश्रम में ऋषि नारद प्रह्लाद की माता को आत्म-विज्ञान तथा भक्ति-मार्ग सिखाते हैं, जबकि गर्भस्थ शिशु हर वचन ग्रहण करता है (SB 7.7.12-16)।

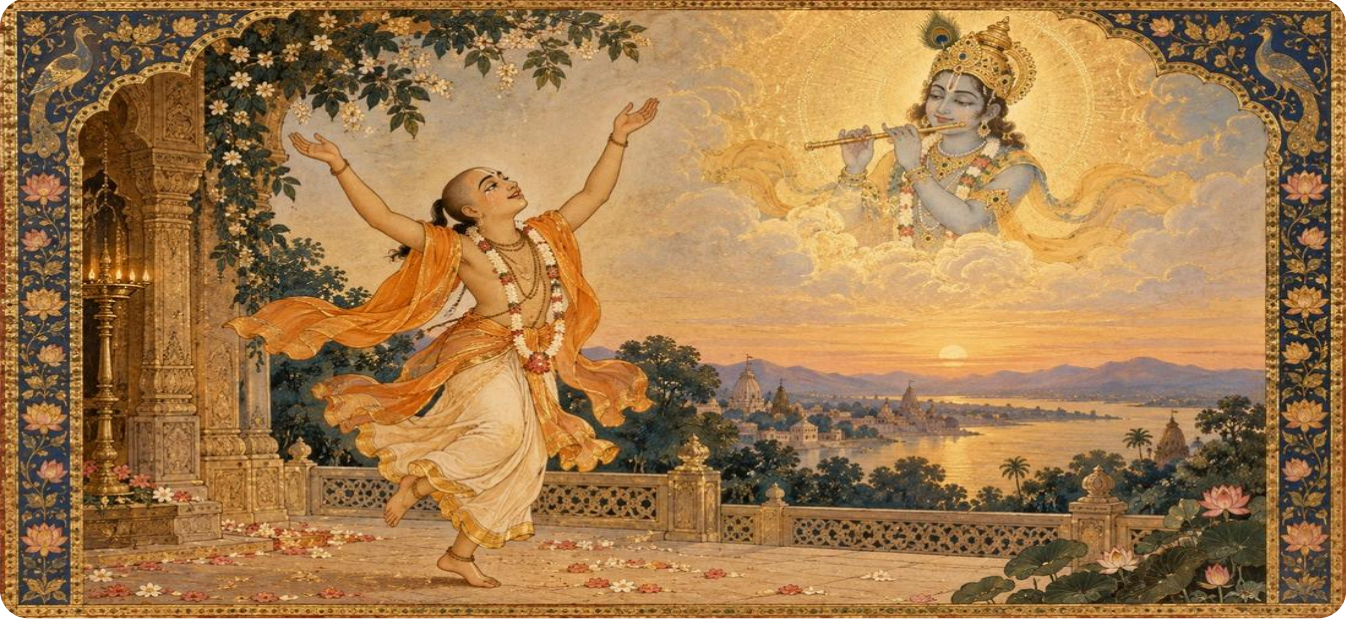
नित्य आत्मा

तब प्रह्लाद ने वह ज्ञान अपने साथियों के साथ बाँटा। जन्म, वृद्धि, क्षय तथा मृत्यु की बदलती अवस्थाएँ, उसने समझाया, शरीर की हैं, आत्मा की नहीं — जैसे फल का पकना और गिरना फल का है, वृक्ष का नहीं। आत्मा स्वयं नित्य है, अविनाशी, शुद्ध, अद्वितीय, ज्ञाता साक्षी, अपरिवर्तनीय तथा स्वयंप्रकाश। एक बुद्धिमान व्यक्ति, आत्मा के इन दिव्य लक्षणों को पहचानकर, शरीर के प्रति “मैं” तथा “मेरा” के मिथ्या भाव को त्याग देता है। जैसे एक निपुण स्वर्णकार खनिज में छिपे स्वर्ण को निकालना जानता है, वैसे ही आत्म-विज्ञान में पारंगत व्यक्ति शरीर के भीतर छिपे सच्चे आत्म को खोज सकता है।

उसने जाग्रत, स्वप्न तथा सुषुप्ति की तीन अवस्थाओं की भी बात की, जो बुद्धि के कार्य हैं — तथा उस साक्षी की, जो इन तीनों से अवगत है और इसलिए इनसे परे है। प्रकृति के गुणों से उत्पन्न कर्म के बीज को, उसने कहा, उस योग से जला देना चाहिए जो चंचल बुद्धि को स्थिर करता है; और इसका सबसे निश्चित उपाय है बस भगवान् के प्रति प्रेम विकसित करना — अपने गुरु की सेवा करके, भक्तों की संगति रखकर, भगवान् की महिमा सुनकर और गाकर, उनके चरणों का ध्यान करके, तथा प्रत्येक प्राणी को श्रीहरि का धाम मानकर उसका आदर करके।

भक्त का आनन्द-भाव

प्रह्लाद ने वर्णन किया कि जब ऐसा प्रेम जागता है तब क्या होता है। भगवान् के अनुपम कार्यों तथा लीलामय अवतारों को सुनकर, भक्त अश्रुद्ध कण्ठ से ऊँचे स्वर में गाता है, नृत्य करता है, और पुकारता है, आनन्द से रोमांचित; कभी हँसता, कभी रोता, कभी ध्यान में मग्न बैठता, और बिना किसी संकोच के पुकारता, “हे हरि! हे विश्वपति! हे नारायण!” उस अवस्था में उसके बन्धन ढीले पड़ जाते हैं, उसका अज्ञान और गुप्त वासनाएँ जल जाती हैं, और, अपने मन तथा शरीर को पूर्णतः भगवान् में लगाकर, वह उन्हें प्राप्त कर लेता है। अतः, प्रह्लाद ने आग्रह किया, अपने हृदय के स्वामी की उपासना अपने हृदय-कमल के भीतर ही करो — क्योंकि श्रीहरि की उपासना में, जो तुम्हारे भीतर तुम्हारे अपने अस्तित्व के आकाश-समान निवास करते हैं, कितना बड़ा प्रयास लगता है?



प्रह्लाद प्रेमी भक्त के आनन्द-भाव का वर्णन करता है, जो आनन्द के आँसुओं सहित गाता और नृत्य करता है, भगवान् के नामों को पुकारता है जब तक कि हर सांसारिक बन्धन ढीला न पड़ जाए (SB 7.7.34-37)।

भक्ति सबके लिए खुली है

अन्त में प्रह्लाद भक्ति के उस महान समानता-प्रदायक सत्य की ओर मुड़ा। धन, परिवार, भूमि तथा विलास, उसने कहा, क्षणभंगुर हैं और आत्मा को तृप्त नहीं कर सकते, जो स्वयं नित्य आनन्द का सागर है; यज्ञ से जीते गए स्वर्ग-लोक भी नाशवान हैं। भगवान् को जो वस्तुतः प्रसन्न करता है वह न उच्च कुल है, न विद्या, न दान, न तप, न कर्मकाण्ड, अपितु शुद्ध तथा अनन्य भक्ति है:

नालं द्विजत्वं देवत्वमृषित्वं वासुरात्मजाः ।

प्रीणनाय मुकुन्दस्य न वृत्तं न बहुज्ञता ॥ ५१ ॥

न दानं न तपो नेज्या न शौचं न व्रतानि च ।

प्रीयतेऽमलया भक्त्या हरिरन्यद् विडम्बनम् ॥ ५२ ॥

nālaṁ dvijatvaṁ devatvam ṛṣitvaṁ vāsūrātmajāḥ prīṇanāya mukundasya na vṛttaṁ na bahu-jñatā na dānaṁ na tapo nejyā na śaucaṁ na vratāni ca prīyate 'malayā bhaktyā harir anyad viḍambanam

अर्थ: हे असुर-पुत्रो, न उच्च कुल में जन्म, न देवत्व, न ऋषित्व, न सदाचार, न विशाल विद्या, न दान, न तप, न यज्ञ, न शौच, न व्रत — इनमें से कोई भी स्वयं भगवान् मुकुन्द को प्रसन्न नहीं कर सकता। श्रीहरि केवल शुद्ध, अनन्य भक्ति से प्रसन्न होते हैं; शेष सब मात्र दिखावा है। (SB 7.7.51-52)

यहीं इस शिक्षा का महत्त्व उस क्षण से कहीं आगे तक फैला हुआ है। प्रह्लाद न कोई ब्राह्मण है, न वृद्ध, न संन्यासी — वह एक असुर-कुल में जन्मा नन्हा बालक है, जो अन्य असुर-बालकों को उपदेश दे रहा है। यदि भगवान् की कृपा उच्च कुल, आचार की शुद्धता अथवा वर्षों की तपस्या के लिए ही सुरक्षित होती, तो प्रह्लाद को स्वयं उपदेश देने का कोई अधिकार न होता, और नारद के आश्रम में उसकी माता की भक्ति भी व्यर्थ

होती। यह आग्रह करके कि निष्काम प्रेम ही अकेला भगवान् को जीतता है, प्रह्लाद अपने ही सिद्धान्त-कथन में अपनी स्वयं की स्थिति स्पष्ट कर रहा है: दिव्य कृपा कभी किसी के पहले योग्य बनने की प्रतीक्षा नहीं करती। यही कारण है कि नारद एक अजन्मे शिशु तथा एक असुर की पत्नी को समान गम्भीरता से उपदेश दे सके, और यही कारण है कि भगवान् ने, बिना माँगे, प्रह्लाद को उसके जन्म से पहले ही अपना घोषित कर दिया (श्लोक 9-17, 51-52)।

क्योंकि वही भगवान् प्रत्येक हृदय में समान रूप से निवास करते हैं, प्रह्लाद ने आगे कहा, इसलिए मनुष्य को प्रत्येक अन्य प्राणी के हित को ठीक अपने ही हित के समान मानना चाहिए, और उनमें विराजमान परमात्मा की उपासना करनी चाहिए (श्लोक 53)। अनेक असुर, यक्ष, स्त्रियाँ, श्रमिक, गोपाल, पक्षी तथा पशु, उसने उन्हें स्मरण कराया, ऐसी भक्ति से अमरता को प्राप्त हुए हैं। और उसने समस्त मार्ग को एक ही श्लोक में समेट दिया:

एतावानेव लोकेऽस्मिन्पुंसः स्वार्थः परः स्मृतः ।
एकान्तभक्तिर्गोविन्दे यत्सर्वत्र तदीक्षणम् ॥ ५५ ॥

etāvān eva loke 'smin puṁsaḥ svārthaḥ paraḥ smṛtaḥ ekānta-bhaktir govinde yat sarvatra tad-ikṣaṇam

अर्थ: इस लोक में मनुष्य का यही एकमात्र परम कल्याण कहा गया है: भगवान् गोविन्द के प्रति अनन्य भक्ति, जो उन्हें प्रत्येक प्राणी में विद्यमान देखने के ही समान है। (SB 7.7.55)



प्रह्लाद सिखाता है कि भक्ति सबके लिए खुली है — असुर तथा देव, स्त्रियाँ तथा श्रमिक, पक्षी तथा पशु समान रूप से — और यह कि प्रत्येक प्राणी में भगवान् को देखना ही जीवन का परम लक्ष्य है (SB 7.7.51-55)।

इस अध्याय को मुख्य शिक्षाएँ

1. कृपा भक्त की रक्षा जन्म से पूर्व भी करती है। प्रह्लाद की माता संकट से उबार ली जाती है, और गर्भस्थ शिशु को एक महान भक्त घोषित किया जाता है जिसका कोई वध नहीं कर सकता। भगवान् की रक्षा अपने सेवक तक गर्भ में भी पहुँचती है (SB 7.7.9-11)।
2. आध्यात्मिक सत्य किसी को भी प्राप्त हो सकता है, गर्भस्थ शिशु को भी। नारद द्वारा कहा गया ज्ञान गर्भस्थ प्रह्लाद में जड़ जमा गया और उससे कभी नहीं मिटा। सच्ची श्रद्धा, वह कहता है, स्त्रियों तथा बालकों में भी विवेक जगा सकती है — कोई भी वंचित नहीं है (SB 7.7.15-17)।
3. आत्मा नित्य है; शरीर तथा उसकी अवस्थाएँ नहीं। जन्म, वृद्धि तथा क्षय शरीर के हैं, जैसे पकना फल का है, वृक्ष का नहीं। भीतर के अमर आत्म को पहचानना ही समस्त सच्चे ज्ञान का लक्ष्य है (SB 7.7.18-21)।
4. भगवान् केवल शुद्ध भक्ति से ही जीते जाते हैं। न जन्म, न विद्या, न दान, न तप, अपितु अनन्य प्रेम श्रीहरि को प्रसन्न करता है; और वह प्रेम प्रत्येक प्राणी में भगवान् को देखने के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। यही मनुष्य-जीवन का परम कल्याण है (SB 7.7.51-55)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

प्रह्लाद जिस प्रकार अपने मित्रों को उत्तर देता है उसमें एक सुन्दर विनम्रता है। वह अपने ज्ञान को अपनी उपलब्धि नहीं बताता; वह उसे कृतज्ञतापूर्वक एक ऋषि की दया तथा एक माता की भक्ति तक, और उनसे परे उन भगवान् की कृपा तक ले जाता है जिन्होंने यह सब रचा। वह बालक, जिसे अग्नि या तलवार मार न सकी, वस्तुतः जन्म से पूर्व ही प्रेम से गढ़ा गया था — एक ऋषि जिसने असहाय की रक्षा की, एक माता जिसने श्रद्धा से सेवा की, एक शिक्षा जो गर्भ की अन्धकारमय शान्ति में प्राप्त हुई। यह इस बात का चित्र है कि आध्यात्मिक जीवन वस्तुतः हमारे पास कैसे आता है: हमारी चतुराई से गढ़ा हुआ नहीं, अपितु उन लोगों की दया से प्राप्त जो सत्य को धारण करते हैं, और हमारी अपनी श्रद्धा से जड़ पकड़ता। और प्रह्लाद का निष्कर्ष उस कृपा को कभी विशिष्ट नहीं बनने देता। यदि भगवान् केवल शुद्ध भक्ति से प्रसन्न होते हैं, तो कोई भी — चाहे उसका जन्म या परिस्थिति कितनी भी निम्न क्यों न हो — वंचित नहीं है; और यदि भक्ति का अर्थ है उन्हें प्रत्येक प्राणी में देखना, तो मार्ग स्वयं हमें कोमल बना देता है। भगवान् से प्रेम करना और समस्त प्राणियों को श्रद्धा से देखना, अन्ततः, हृदय की एक ही गति है।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज दूसरों में भगवान् को देखने का अभ्यास करें। जिन एक या दो व्यक्तियों से आप मिलें — शायद किसी ऐसे को जिसे सहज ही अनदेखा किया जाए — चुनें और मौन रूप से स्वयं को स्मरण कराएँ कि श्रीहरि उनके भीतर वैसे ही निवास करते हैं जैसे आपके भीतर, उन्हें सच्चे आदर या दया का एक क्षण अर्पित करते हुए। ऐसा करते हुए, भीतर दोहराएँ: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” इसे प्रह्लाद की अन्तिम शिक्षा का एक छोटा साकार-रूप बनने दें — कि भगवान् के प्रति अनन्य भक्ति तथा उन्हें प्रत्येक प्राणी में देखना एक ही हैं।

उपसंहार

सप्तम स्कन्ध का यह सप्तम अध्याय उस प्रश्न का उत्तर देता है जिसने प्रह्लाद के साथियों को चकित कर दिया था, और उसके साहस की छिपी हुई जड़ को उजागर करता है: जन्म से पूर्व प्राप्त एक शिक्षा, एक ऋषि की करुणा से सुरक्षित, तथा इस सत्य से मुद्रांकित कि कृपा किसी को भी पहले योग्य सिद्ध होने के लिए नहीं कहती। हमारे लिए इसका एक ही चिरस्थायी सन्देश प्रह्लाद के अपने समापन-श्लोक में है — कि निष्काम

भक्ति ही, न कि जन्म या उपलब्धि, भगवान् को जीतती है, और ऐसी भक्ति केवल उन्हें प्रत्येक प्राणी में देखने की तत्परता है। यह नींव रख देने के साथ, कथा अब अपने महान चरम की ओर मुड़ती है, जब स्वयं भगवान् उस भक्त की रक्षा हेतु अवतरित होंगे जिसे वे पहले ही अपना घोषित कर चुके हैं।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जागृत करे।

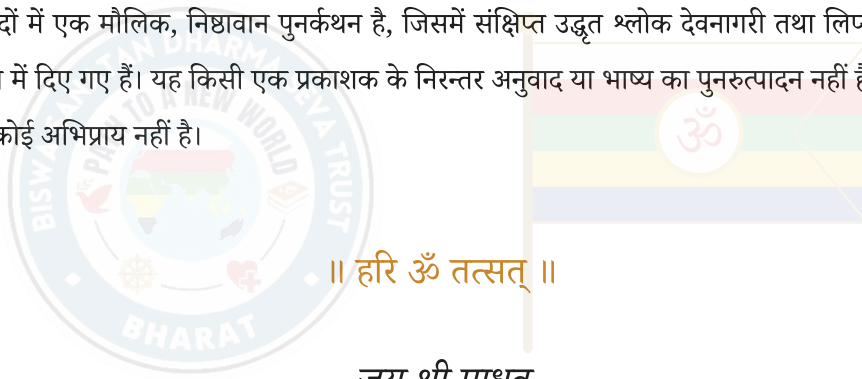
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, पूर्ण), सप्तम स्कन्ध, सप्तम प्रवचन, पृष्ठ 675–680।
- शृंखला: Srimad Bhagavatam Wisdom · Biswa Sanatan Dharma Seva Trust।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या भाष्य का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक द्वारा संबद्धता या समर्थन का कोई अभिप्राय नहीं है।



जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-7-chapter-7-what-prahlada-learned-in-the-womb-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज़डम · कल्कि अवतार इंटरनेशनल · बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट